ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-10* November- 2017
Innovation The Research Concept

कन्हैयालाल सेठिया की कविताओं में जीवन–दर्शन के चितराम

सुरेन्द्र डी. सोनी
एसोसिएट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग
राजकीय लोहिया स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
चूरू, राजस्थान

सारांश

किसी साहित्यकार के अवदान का समय–समय पर मूल्यांकन करना अध्येताओं का धर्म है। खास तौर से जब कोई साहित्यकार एक से अधिक भाषाओं में अपना योगदान करता है, तब उसका अवदान सभ्य समाज के सामने लाना बहुत जरूरी हो जाता है। कन्हैयालाल सेठिया राजस्थानी और हिंदी के ऐसे साहित्यकार हुए हैं, जिनके अवदान को अकादमिक जगत में अब तक वह स्थान नहीं मिला है, जिसके वे हकदार हैं। राजस्थानी साहित्य के क्षेत्र में तो फिर भी उन्हें बीसवीं सदी का पुरोधा माना गया है, लेकिन हिंदी साहित्य में, अनुवाद उपलब्ध होने के बावजूद, उनकी गिनती प्रमुख आधार–स्तम्भों में नहीं है। इस दिशा में काम की शुरूआत हो, इस दृष्टि से इस पत्र में, बानगी के रूप में कुछ रचनाएं प्रस्तुत करते हुए, कन्हैयालाल सेठिया के कर्म और धर्म को उजागर करने की आवश्यकता प्रतिपादित की गई है। भारतीय संस्कृति और दर्शन का जो स्वर कन्हैयालाल सेठिया की कलम से उभरा है, उस पर एकाधिक स्तरों पर शोध–कार्य प्रारम्भ किए जाने की अपेक्षा की जानी चाहिए।

मुख्य शब्द : धोरा, धजा, गिगनारां, तनड़ो–मनड़ो, उंवारां, चितराम, रमणियां, गळगचिया, मींझर, मायड़, हेलो, सबद, दीठ, लीकलकोळिया, पिणयारी, पिणघट, ठीकरी, ओळखै, पिणयारी, अणख'र, छाणाऊँ, आभै, मगरां, चिणख, लीलटांस, पातल, पीथळ, आखर, दकाल।

प्रस्तावना

भारत का कोई ऐसा भू–क्षेत्र नहीं है, जिसने वीरों और कवियों को जन्म न दिया हो। इस दृष्टि से राजस्थान तो है ही अनूठा। राजस्थान के इस अनूठेपन को आधुनिक काल में यदि किसी ने गीत–रूप में जन–जन का कंठहार बनाया है, तो वे कवि कन्हैयालाल सेठिया हैं। राजस्थानी भाषा में रचा हुआ उनके गीत *धरती धोरां री* की देश–विदेश में जो लोकप्रियता है – वह भाषा के बंधन से मुक्त करके इसे मातृ–भूमि के प्रति प्रेम का विश्व–गान बना देती है। कालजयी कवि ही भाषा का यह बंधन तोड़ सकते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

बीसवीं सदी में राजस्थानी और हिंदी साहित्य के क्षेत्र में समान रूप से काम करने वाले पुरोधा कवि कन्हैयालाल सेठिया के अवदान को उजागर करते हुए यह प्रकट करना कि उनके द्वारा उठाया गया देशभक्ति और दर्शन का स्वर अपने दौर के अत्यधिक प्रसिद्ध साहित्यकारों के स्वर से ऊँचा नहीं, तो बराबर अवश्य था।

रचना–संसार

कन्हैयालाल सेठिया राजस्थानी के ही नहीं हिन्दी और उर्दू के भी कवि हैं। उनकी राजस्थानी में चौदह, हिन्दी में अठारह और उर्दू में दो पुस्तकें प्रकाशित हैं। राजस्थान साहित्य अकादमी ने उन पर अपनी मुख–पत्रिका *मधुमती* का एक विशेषांक भी प्रकाशित किया है। *मधुमती* में बरसों से सेठिया पर लिखा जा रहा है। राजस्थानी में प्रकाशित उनकी प्रमुख कृतियां *रमणियां रा सोरठा, गळगचिया, मींझर, धर कूचां धर मजलां, मायड़ रो हेलो, सबद, सतवाणी, अघोरी काळ, दीठ, कूकूं, कक्को कोड रो, लीकलकोळिया* आदि हैं। हिन्दी में उनकी प्रसिद्धि *खुली खिड़कियां चौड़े रास्ते, प्रतिबिम्ब, वनफूल, अग्निवीणा, अनाम, देह विदेह, आकाशगंगा, वामन विराट* आदि पुस्तकों से हुई। उर्दू में उनकी दो रचनाएं *ताजमहल* और *गुलची* प्रकाशित हैं। सेठिया वे भाग्यशाली कवि हैं, जिनकी रचनाओं का दूसरी भाषाओं में अनुवाद भी हुआ है। उनका मानना था कि हिन्दी के बिना भारत और राजस्थानी के बिना राजस्थान की कोई पहचान नहीं हो सकती। राजस्थानी में जुगलकिशोर जैथलिया ने *कन्हैयालाल सेठिया*

समग्र प्रकाशित किया है। हिंदी में प्रकाशित उनकी अधिकतर पुस्तकें सहज ही उपलब्ध हैं। उनके साहित्य पर शोध–प्रबंध भी लिखे गए हैं। राजस्थानी को आसानी से समझने के लिए सीताराम लालस के राजस्थानी से हिंदी में किए गए अर्थ के ग्यारह खंड उपलब्ध हैं। उनकी हिंदी कविताओं को समझने के लिए भारतीय षड्दर्शन को जानना–समझना भी अपेक्षित है।

धरती धोरां री

भारत में मातृभूमि की वंदना के लिए सर्वाधिक लोकप्रिय गीत बंकिमचन्द्र चटर्जी द्वारा रचित *वंदे मातरम* माना जाता है। कन्हैयालाल सेठिया द्वारा रचित *धरती धोरां री* भी मातृभूमि की वंदना का, *वंदे मातरम* की ही तरह, अत्यन्त लोकप्रिय गीत है। कवि कहता है –

ईं पर तनड़ो–मनड़ो वारां
ईं पर जीवण–प्राण उंवारां
ईं री धजा उड़ै गिगनारां!

अपनी अंतर्निहित सम्प्रेषणीयता के कारण यह गीत सार्वभौमिक हो जाता है। यह सार्वभौमिकता लोगों को प्रेरित करती है कि वह धजा, उंवारां और गिगनारां जैसे शब्दों को राजस्थान के बहुरंगी लोक–चितरामों के परिप्रेक्ष्य में ही समझे। लोकप्रिय गीतों को समझने के अभ्यास में लोक–भाषाओं का राष्ट्रीयकरण से सहज ही अन्तरराष्ट्रीयकरण हो जाता है।

राजस्थानी लोक–रंग और दर्शन के स्वर

वे राजस्थान के सुजानगढ़ कस्बे में जन्मे थे, इसलिए राजस्थानी के विकास और विस्तार के प्रति उनका विशेष आग्रह था। वे कहते हैं –

खाली धड़ री कद हुवै, चेरै बिन्यां पिछाण।
मायड़ भासा रै बिन्यां, क्यां रो राजस्थान।।

राजस्थानी के प्रति विशेष अनुराग होते हुए भी सेठिया ने हिन्दी की उपेक्षा कभी नहीं की। वे जितने राजस्थानी में सहज थे, उतने ही सहज हिन्दी में भी थे। दर्शन उनका मुख्य स्वर रहा है। जब यह स्वर राजस्थानी में उभरा है, तो वह लोक–रंग के साथ ही उभरा है। *गळगचिया* में वे कहते हैं –

पिणघट परॉं पड़ी ठीकरी पूछ्यो –
घड़ा मनै ओळखै है के ?
बीच में ही पिणयारी अणख'र बोली –
पैली मूंडो छाणाऊँ रगड़'र आ।
अत्तै में ठोकर लागी'र घड़ो फूटग्यो।
ठीकरी ठीकरयां स्यूं जा मिली!

जीवन का सार समझने के लिए इससे उपयुक्त शब्द–चित्र और क्या होगा? हां, यह अवश्य है कि जिसे इस सार को कन्हैयालाल सेठिया की दृष्टि से समझना होगा, उसे *पिणघट, ठीकरी, ओळखै, पिणयारी, अणख'र, छाणाऊँ* आदि शब्दों को राजस्थान के लोक–रंग में भिगो कर ही देखना होगा। ये शब्द मिलकर एक अद्भुत चितराम रचते हैं, जिससे हमें यह आसानी से समझ में आ जाता है कि मिट्टी की नियति आखिर मिट्टी में मिल जाना ही है। कवि ने अत्यन्त सरलता से हमें समझा दिया कि यह जीवन क्षणभंगुर है। यही बात कबीर अपने ढंग से कहते हैं –

माटी कहे कुम्हार से, तू क्यों रौंदे मोय।
इक दिन ऐसा आएगा, मैं रौंदूंगी तोय।।

गालिब ने भी इस तरह के चिंतन को बड़ी खूबसूरती से व्यक्त किया है, लेकिन गालिब को समझने के लिए एक खास तरह के अध्ययन की आवश्यकता होती है। गालिब ने कहा है –

जला है जिस्म जहां दिल भी जल गया होगा,
कुरेदते हो जो अब राख जुस्तजू क्या है।

भारतीय दर्शन को समझने में कई बार उसकी संस्कृतनिष्ठता भी आड़े आती है। शंकर का इस देश को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में बांधने में महान् योगदान है। उन्होंने *ब्रह्म* और *माया* के बीच सम्बन्ध को बड़े ही वैज्ञानिक तरीके से व्याख्यायित किया। देश–विदेश में शंकर का दर्शन बहुत लोकप्रिय हुआ। फिर भी यह देखा है गया कि जिन्हें शास्त्रों का ज्ञान है और जिन्होंने दर्शन की विभिन्न शाखाओं का गहराई से अध्ययन किया है – वे शंकर की बातों को जितनी सरलता से समझ पाए, उतनी सरलता से आम आदमी नहीं समझ पाया। आम आदमी को शंकर की यह बात सूत्र–रूप में ही अधिक याद रही कि सब कुछ *माया* है और *माया* के अतिरिक्त इस जग में और कुछ नहीं है। वह यह नहीं समझ पाया कि आखिर यह *माया* होती क्या है, लेकिन वही आम आदमी अपनी ही माटी में जाये–जन्मे कवि द्वारा प्रयुक्त आंचलिक भाषा के शब्दों और स्थानीय प्रतीकों के माध्यम से *माया* को बड़ी सरलता से समझ लेता है। शंकर द्वारा बताए गए ब्रह्म और माया के सम्बन्ध को कन्हैयालाल सेठिया ने अपनी ही शैली में समझाया कि *ब्रह्म* और *माया* का साथ वैसा ही है, जैसा सूई और धागे का।

बिरम अर माया रो सागो
सूई रै लारै धागो!

जीवन की *माया* को, उसकी क्षणभंगुरता को कवि सेठिया हिन्दी में इस तरह प्रकट करते हैं –

बनता बीज, गल फल
जल सूख, बादल
दीप बुझ, काजल
तल डूब, अतल
आज मिट, कल!

सच्चा कवि वह होता है, जो लोगों को जीवन में सन्तुलन की महत्ता समझाए। कवि सेठिया ने हिन्दी में कहा –

नहीं हार, किंतु विजय के बाद अशोक बदलते हैं
निर्दयता के कड़े ठूंठ से करुणा के फल फलते हैं।

भले ही अशोक ने राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करुणा का प्रदर्शन किया हो, लेकिन कन्हैयालाल सेठिया जैसे रचनाकार के लिए वह जग को करुणा सिखाने का प्रतीक बन जाता है। यहाँ कवि का संकेत स्पष्ट है कि जीवन में सन्तुलन जरूरी है। वे कहना चाहते हैं कि हार की कुण्ठा अशान्ति को जन्म देती है, लेकिन उनके यह कहने से यहां एक प्रश्न भी खड़ा हो जाता है कि जब दो पक्षों में संघर्ष होगा, तो एक पक्ष की हार अवश्य होगी। जीतने वाले के मन में तो करुणा उपज जाएगी, लेकिन हारने वाले के मन में तो करुणा उपजेगी नहीं! वह तो मौका मिलते ही जीतने की कोशिश करेगा।

इस स्थिति में कवि के पास क्या समाधान है? इस प्रश्न का उत्तर कवि सेठिया अपनी राजस्थानी कविता में इस प्रकार देते हैं –

माचै नै दावण चाहिजै
दही नै जावण चाहिजै
बणनै खातर नारायण
राम नै रावण चाहिजै।

कवि कहना चाहता है जिस तरह माचे को दावण और दही को जावण चाहिए – उसी तरह राम को, नारायण बनने के लिए, एक रावण चाहिए। यहां *माचे* का मतलब खाट से है और *दावण* का मतलब उस रस्सी से है, जिससे खाट को बुना जाता है। *जावण* का अर्थ जामन से है, जिससे दही जमाया जाता है।

कवि की विलक्षणता होती है अपनी बात को प्रतीकों के माध्यम से समझाना। कन्हैयालाल सेठिया प्रतीक–विज्ञान के पुरोधा हैं। बात–बात में बात कहते हुए वे जिन प्रतीकों का इस्तेमाल करते हैं, वे अनूठे होते हैं। एक कविता में वे चक्की को प्रतीक बनाकर अपनी बात इस तरह कहते हैं –

चक्की का निचला पाट सच
ऊपर का पाट झूठ
सच की छाती में कील
झूठ की पीठ में मूठं

चक्की के प्रतीक के माध्यम से यह बात सरलता से स्पष्ट हो जाती है कि चक्की का निचला पाट – जो स्थिर रहता है, वह सच है और ऊपर का पाट – जो घूमता है, वह झूठ है। वे कहते हैं कि सच की छाती में छेद है और झूठ की पीठ पर मूंठ है। वे कहना चाहते हैं कि सच को हर स्थिति में चुनौती झेलनी होती है, जबकि झूठ के साथ वह शक्ति होती है, जो सच को दुर्बल करने का प्रयत्न करती है।

कवि सेठिया बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। यह बहुआयामी व्यक्तित्व ही उन्हें बहुआयामी रचनाकार बना पाया। एक ओर जहां वे सूई, डोरा, ठीकरी, मटका, पनिहारी, मिट्टी, घड़ा आदि प्रतीकों के माध्यम से कविता को धरातल पर रमण करने के लिए खुला छोड़ देते हैं – तो दूसरी ओर बांसुरी, लीलटांस, दर्पण आदि प्रतीकों के माध्यम से वे उसे रहस्य के ऐसे लोक में ले जाकर छोड़ देते हैं कि कविता स्वयं अपनी जगह तलाशने के लिए विकल हो उठती है। वे कहते हैं –

बांसुरी में पांच और पंख में एक छेद
इतना ही है राग और नाद में भेद
एक प्रत्यक्ष गीता
दूसरा साम्रत वेद!

सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार

सामाजिक विसंगतियों को भी कवि सेठिया बहुत प्रभावी रूप से प्रस्तुत करते हैं। उनकी यह छोटी–सी कविता, जिसमें वे सूई और डोरे को प्रतीक बनाते हैं, व्यवस्था पर इतनी तीखी चोट करती है कि आधुनिक कविता के इतिहास में इसके समकक्ष उदाहरण कम ही मिलते हैं –

सूई डोरै में करी खारी
गरीब नै फंसा'र निकळगी
आ किसी'क साहूकारी?

सूई–धागे के माध्यम से ही वे कहते हैं कि सूई ने डोरे में बहुत बुरा व्यवहार किया है। वह धागे को कपड़े में फंसाकर स्वयं बाहर निकल आई है। यह कैसी साहूकारी है, जिसमें गरीब के साथ इतना बड़ा अन्याय होता है? उनका आशय है कि चाहे नेता हो, साहूकार हो, सामन्त हो या पूंजीपति हो – सभी भोली–भाली जनता को संकट में डालकर खुद सुख का जीवन जीते हैं। सूई–धागे का यह प्रतीक व्यवस्था पर बहुत करारी चोट करता है। राजस्थान के लोगों को कवि सेठिया की इस तरह की छोटी–छोटी कविताएं सूक्तियों के रूप में याद हैं।

बिम्ब–संयोजन और उपमा–विधान

अद्भुत बिम्ब–संयोजन और मोहक उपमा–विधान के कारण ही किसी कवि की रचनाएं जन–जन का कण्ठहार बन सकती हैं। इंद्रधनुष के सम्बन्ध में उनका एक शब्द–चित्र है, जिसका अनुवाद किसी दूसरी भाषा में करना बहुत कठिन है। वे कहते हैं –

आभै रै मगरां में
पड़गी चिणख
निरदयी मिनख कैयो
राम धिणक!

दाम्पत्य की मधुर भावना और प्रेम के रहस्य को सेठिया ने मोमबत्ती और उसमें गड़े धागे को केंद्र में लेकर जो बिम्ब रचा है, वह भी अद्वितीय है –

मैणबत्ती कैयो – डोरा
म्हैं थारै सूं कत्तो मोह राखूं हूं
सीधी ई काळजै में ठोड़ दीनी है
डोरो बोल्यो – म्हारी मरवण
जणां ई तिल–तिल बळूं हूं!

कवि कहता है कि मोमबत्ती ने धागे से कहा कि मैं तुझसे इतना मोह रखती हूं कि मैंने तुझे अपने कलेजे में जगह दी है। धागा प्रत्युत्तर देता है – हे प्रिया, इसीलिए तो मैं तिल–तिल करके जलता रहता हूं।

सम्मान

कवि सेठिया का जन्म राजस्थान के सुजानगढ़ कस्बे में 11 सितम्बर 1921 को हुआ था। 1976 में राजस्थानी कविता–संग्रह *लीलटांस* पर उन्हें साहित्य अकादमी, नई दिल्ली द्वारा सर्वश्रेष्ठ कृति का पुरस्कार मिला। 1983 में राजस्थान साहित्य अकादमी ने उन्हें न केवल *साहित्य मनीषी* सम्मान दिया, बल्कि उन पर अपनी मुख–पत्रिका *मधुमती* का विशेषांक भी प्रकाशित किया। 1987 में उन्हें राजस्थानी अकादमी का *सूर्यमल्ल मीसण पुरस्कार* मिला। राजस्थानी अकादमी ने ही 2004 में उन्हें अपना सर्वोच्च सम्मान *पृथ्वीराज राठौड़ पुरस्कार* प्रदान किया। 1988 में हिन्दी कृति *निर्ग्रन्थ* पर उन्हें भारतीय ज्ञानपीठ की ओर से *मूर्तिदेवी साहित्य पुरस्कार* मिला। राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर ने उन्हें 2005 में *पीएच–डी* उपाधि से विभूषित किया। इस प्रकार साहित्य जगत में अपनी अमिट छाप छोड़कर कन्हैयालाल सेठिया, जिन्हें भारत और राजस्थान सरकार ने क्रमशः *पद्मश्री* और *राजस्थान–रत्न* के श्रेष्ठ नागरिक सम्मान प्रदान किए थे, ने 11 नवम्बर 2008 को इस संसार से विदा ली।

स्वतंत्रता सेनानी

एक कवि का केवल यही दायित्व नहीं होता है कि वह अपनी शब्द–साधना को दर्शन आदि तक ही सीमित रखे। कवि का यह भी दायित्व होता है कि समाज में जहां भी अन्याय होता दीखे, वह अपनी आवाज बुलन्द करे। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में वे सत्ता के प्रति अपने अस्वीकार को सार्वजनिक करने से स्वयं को रोक नहीं पाए और कृति *अग्निवीणा* के माध्यम से विरोध का झंडा उठाकर खड़े हो गए। *अग्निवीणा* पर प्रतिबंध लगा और उन पर राजद्रोह का मुकदमा चला। इसी के चलते राजस्थान सरकार ने 1992 में उन्हें *स्वतंत्रता सेनानी* का दर्जा दिया। जब राजस्थान के एकीकरण का प्रश्न ज्वलन्त था, तब उन्होंने आबू को गुजरात के बजाय राजस्थान में शामिल करवाने के लिए चल रहे जन–आन्दोलन का पूरा समर्थन किया। अन्ततः आबू राजस्थान में शामिल हुआ। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कन्हैयालाल सेठिया एक समर्थ कवि होने के साथ–साथ एक जागरूक नागरिक भी थे।

इतिहास–दृष्टि

यह एक सुखद आश्चर्य है कि प्रतीकों के माध्यम से यथार्थ और रहस्य के रमझोल में उलझे कवि को इतिहास के लोकप्रिय प्रसंग भी ध्यान में आए, जिन्हें केन्द्र में रखकर लोक–जागरण का काम सरलता से किया जा सकता है। इसी के चलते उन्होंने *पातल अर पीथळ* जैसा अमर गीत रचा। इसकी पृष्ठभूमि में वह घटना है, जिसमें अपने परिवार और प्रजा को कष्ट में देखकर महाराणा प्रताप अकबर के संधि–प्रस्ताव को स्वीकार करने की तैयारी कर लेते हैं। यहाँ *पातल* महाराणा प्रताप हैं और *पीथळ* बीकानेर के राजा रायसिंह का छोटा भाई पृथ्वीराज राठौड़ है, जिसने प्रताप को पत्र लिखकर देश की आन की रक्षा के लिए संधि न करने की सलाह दी थी, जबकि वह स्वयं अकबर के अधीन सेवारत था। इस गीत की महिमा से सेठिया का ओज से भरा स्वर लोक–मानस में सदा के लिए अंकित हो गया। इस गीत में वे कहते हैं –

पीथळ रा आखर पढ़तां ही
राणा री आंख्यां लाल हुई
धिक्कार मनै, हूं कायर हूं
नाहर री एक दकाल हुई
राखो थे मूंछ्याँ ऐंठ्योड़ी
लोही री नदी बहा द्यूंला
हूं अथक लडूंला अकबर सूं
उजड़्यो मेवाड़ बसा द्यूंला!

लम्बी कविता के इस अंश का भाव यह है कि पृथ्वीराज का पत्र पढ़ते ही महाराणा प्रताप की आंखें क्रोध से लाल हो गईं। उन्होंने शेर की तरह गरजकर कहा कि धिक्कार है मुझे, जो मैं अधीनता स्वीकार करूं! वे पृथ्वीराज से कहते हैं कि अपनी मूंछों की ऐंठन वे बरकरार रखें। मुझे चाहे खून की नदियां बहानी पडे, मैं अकबर से अथक संघर्ष करूंगा और उजड़ा हुआ मेवाड़ फिर से बसा दूंगा। रोंगटे खड़े कर देने वाला उनका यह तेवर कविता हळदीघाटी में भी बरकरार है –

कोनी कोरो नांव
रेत रो हळदीघाटी
अठै उग्यो इतिहास
पुजीजै इण री माटी!

निष्कर्ष

हमारी नई पीढ़ी, जो अपने अध्ययन और अभिरुचि के लिए सोशल मीडिया पर निर्भर है, और जिसे उसका रचनात्मक रूप से प्रयोग करना भी ठीक तरह से नहीं आता है। यदि इस नई पीढ़ी को भारत के गौरवशाली इतिहास से यदि जोड़ा नहीं गया, तो वह दिन दूर नहीं – जब हम विशुद्ध भौतिक युग में प्रवेश कर जाएंगे। इसलिए सेठिया जैसे कवियों के अवदान को विभिन्न पटलों पर समुचित रूप में उभारा जाना चाहिए, जिनके प्रेरणादायी शौर्य–गीत अपार सम्भावना से भरे हुए हैं। दूसरे, दर्शन जैसे गूढ़ विषय को सरलता से लोक–मानस का हिस्सा बना देने की उनकी क्षमता का भी मूल्यांकन होना चाहिए। इस दृष्टि से कन्हैयालाल सेठिया के साहित्य में वे सभी तत्व मौजूद हैं, जो ज्ञान की दर्शन–शाखा में होने अपेक्षित होते हैं। इन तत्वों को व्याख्यायित करने का दायित्व उन सभी अध्येताओं का है, जो विवेचना और गवेषणा के नए गवाक्ष खोलने को आतुर रहते हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *'मधुमती' – कन्हैयालाल सेठिया विशेषांक, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, 1984.*
2. *'कविता के आसपास', मूलचन्द सेठिया, श्याम प्रकाशन, जयपुर, 1992.*
3. *'राजस्थानी साहित्य का इतिहास – आधुनिक काल', बी. एल. माली अशान्त, विवेक प्रकाशन, जयपुर, 1990.*
4. *'पत्रों के प्रकाश में कन्हैयालाल सेठिया', कन्हैयालाल सेठिया, राधादेवी भालोठिया, कन्हैयालाल ओझा, भालोठिया फाउंडेशन, कोलकाता, 1989.*
5. *'कन्हैयालाल सेठिया समग्र' – राजस्थानी', जुगलकिशोर जैंथलिया, महावीर प्रसाद बजाज, राजस्थान परिषद्, बंगलुरु, 2005.*
6. *'राजस्थान की हिंदी कविता', प्रकाश आतुर, सांघी प्रकाशन, जयपुर, 1979.*
7. *'जिन्हें मैं जानता हूं', डॉ. महेन्द्र भानावत, मुक्तक प्रकाशन, जयपुर, 1986.*
8. *'मरु भारती', अंक 42, बिड़ला एजुकेशन ट्रस्ट, कोलकाता, 1994.*
9. *'रिफ्लेक्शंस इन ए मिरर' – पोयम्स ओफ कन्हैयालाल सेठिया', कन्हैयालाल सेठिया, अनुवाद अरुण कुमार भट्ट, वी. प्रकाश द्वारा निजी तौर पर प्रकाशित, 1973.*
10. *'शब्द–संसार की यायावरी', नंद चतुर्वेदी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1985.*
11. *आजादी का अलख : राजस्थान की स्वतंत्रता–संग्रामकालीन काव्य–चेतना की प्रामाणिकता', मनोहर प्रभाकर, जन जीवन प्रकाशन, जयपुर, 1986.*
12. *'राजस्थानी सबद कोस' (खण्ड 1 से 11), राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2013.*